रामसनेही संतों का हिन्दी काव्य में योगदान

***डॉ. रामजीवन जाटव**

राजस्थान की मरूधरा अपने शौर्य के लिए एक ओर विश्व में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है तो वहीं दूसरी ओर संतों की वाणियाँ भी माधुर्य और सरसता से शांति और सहिष्णुता का संदेश प्रसारित करने में पीछे नहीं रही है। इस प्रदेश की विशेषता रही है कि शौर्य के द्वारा जनमानस में एकात्मकता की भावना को विकसित किया जाये इस कार्य को सरल रूप से सम्पादित करने में विभिनन संत सम्प्रदायों का अपना विशेष महत्त्व रहा है। उन्हीं सम्प्रदायों में से एक राम सनेही सम्प्रदाय है जिसने सामाजिक विभेद मिटाकर सामाजिक समरसता व भाई चारे की नीवं को देकर मजबूत करने पर बल दिया है तथा वे अपनी वाणियों में सहज ईश भक्ति का संदेश देकर जन मन को सदैव जोड़ने का अथक प्रयास करते रहे हैं। ठीक इसी सम्प्रदाय के संत रामचरणजी है। जिन्हेंने रामसनेही पंथ की स्थापना शाहपुरा भीलवाडा नामक स्थान पर की, जिसका अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण स्थान है। तथा स्वामी रामचरण जी इस पीठ के संस्थापक रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके हैं। उन्होंने हिन्दी काव्य में भक्ति भाव को आगे बढाने में विशेष योगदान प्रदान किया है।

कहते हैं रामचरण को किसी अज्ञात संत से रामसनेही शब्द प्राप्त हुआ था जो उन्हें वृंदावन जाते समय राह में अनायास ही मिल गए थे। ऐसा माना जाता है कि वस्तुत: उन अज्ञात संत ने स्वामी रामचरण को रामसनेही कहकर संबोधित किया था।[1] और उन संत के अदृश्य हो जाने के कारण स्वामी जी के मन पर इस बात का गहरा प्रभाव पड़ा और ईश्वरीय शक्ति द्वारा दिया गया नाम स्वीकृत कर उन्होंने अपने अनुयायिओं के लिये यह छाप चला दी। स्वामी रामचरण ने प्रेम की सहायता से ईश्वर प्राप्ति और सामजिक सुख दोनों ही को अपने विचार और कार्यों में स्थान दिया। यही वजह है कि मूल प्रक्रिया ने ही हिंदू धर्म और संस्कृति को एक महत्वपूर्ण योगदान दिया। हिन्दी काव्य की दृष्टि से देखें तो रामसनेही संप्रदाय के पास विपुल साहित्य भंडार है। अणभैवाणी इस साहित्य का प्रमुख आधार है जो स्वामी रामचरण द्वारा लिखित है। इसके अतिरिक्त श्री रामजन जी, श्री दुल्हैरामजी, श्री हरिदास जी, श्री वल्लभराम जी, श्री चेतनदास, श्री रामप्रताप जी, श्री कान्हड़दास, श्री द्वारकादास, श्री भगवानदास जी, श्री देवादास, श्री मुरलीराम, श्री तुलसीदास, श्री नवलरामजी, श्री मुक्तराम जी की अणभैवाणी प्रसिद्ध है। साथ ही श्री रामसेवक जी की स्तुतिसाखी, स्वरूपाबाई के पद, और श्री संग्रामदास जी के कुण्डलियाँ उपलब्ध हैं। गुटका पोथी हाथ से लिखा ग्रंथ के रूप में गुरलीला विलास, फूलडोल समाद, श्री रामचरण महाराज की परची के रूप मे ंउपलब्ध हैं। साथ ही निम्नलिखित पुस्तकों की हस्तलिखित प्रतियों का विवरण भी मिलता है[2]।

–जिज्ञासाबोध 1947वीं, –विश्रामबोध 1957वीं, –समतानिवास 1952वीं, –विश्वासबोध 1944वीं, अमृतउपदेश 1944वीं

–रामचरण के शब्द, –रामरसायनि, –सुखविलास

इन सभी के अतिरिक्त कुछ फुटकर रचनाएँ और अन्य साहित्य भी मिलता है। इन सभी रचनाओं में धर्म, भक्ति प्रकृति, समाज, मनुज और करणीय पक्षों के संदर्भ विशेष रूप से मिलते हैं। इसके साथ ही सभी रचनाओं में इन्होंने साधु संगति और सदाचरण पर बल दिया है। जिसका एक उदाहरण दृष्टव्य हैं–

संगति कीजै साध की, मन की दुबध्या खोय। रामचरण इक पलक में, लोहा कंचन होय[3]॥

इन रचनाओं ने जहाँ हिन्दी कविता की समृद्ध परम्परा को आगे बढ़ाया वहीं आचार, विचार और प्रयुक्ति की दृष्टि से हिन्दू को भी बढ़ावा दिया। भारतीय संस्कृति में समरसता, सहिष्णुता, सर्व धर्म समभाव और अंधकार से उजाले की ओर ले जाने के जो सूत्र हैं यही हिन्दू संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता है, रामसनेही सम्प्रदाय भी जन साधारण को जहाँ अपने जीवन सुधार के उपाय बताता है वहीं सर्वधर्म समभाव से लेकर समरसता, मानवीय मूल्यों का समावेश जैसे पक्ष उनकी रचनाओं में सहज ही देखे जा सकते हैं। जिसका उदाहरण दृष्टव्य है–

अवगुणग्राही आतमा, गुण में समझै नाहिं। अपनी राजस कारणै, कह कसर गुरु माहि[4]।

बहै अविद्या धार लिया शिरभार रे। माह भंवर में पड़ै न पावे पार रे[5]॥

हिन्दू संस्कृति में जहां त्याग, बलिदान, सहिष्णुता, समरसता जैसे पक्षों को महत्त्व मिला है। वही रामसनेही सम्प्रदाय की विचारधारा की प्रयुक्ति भी इन तत्वों को साथ लेकर चलती है। चूंकि स्वामी रामचरण एक पहुँचे हुए संत थे, इसलिए उनके विचारों एवं मानव जीवन के परिष्कार के तत्वों का पूरा लेखा जोखा उनकी रचनाओं में मिलता है। लगभग एक हजार पृष्ठों का विशाल वाणी एवं ग्रंथ साहित्य उनकी इसी धारणा को पुष्ट करता है। स्वामी जी ने उच्च वैश्य कुल में जन्म लिया था। अपने यौवन काल में वे जयपुर राजदरबार

द्रोण कॉलोनी, सब्जी मंडी के पास, शाहपुरा (जयपुर) राज. पिन कोड-303103

हिन्दी प्राध्यापक, राजकीय पी.जी. कॉलेज, चिमनपुरा (शाहपुरा)

में उच्च पद पर कार्यरत थे। तत्पश्चात् उन्होंने प्रवृत्ति से निवृत्ति का मार्ग अपनाया। यह बात महत्वपूर्ण है कि उन्होंने अपने संत जीवन में व्यक्तिगत साधना के स्वरूप के अनुभवों को साधना के माध्यम से पूर्णता देकर समाज को सदाचार के पक्ष से लाभान्वित किया। समाज को पाखण्डों से मुक्ति दिलाकर उन्होंने राजधर्म की विजय पताका को फहराया। साथ ही हिंदू संस्कृति और सरोकारों की सबल पक्ष की अवधारणा को भी ठोस भूमिका प्रदान की स्वामी रामचरण उच्च कोटि के संत विचारक थे, उनहोंने अपने जीवन एवं कार्यों को ही अपनी प्रयोगशाला बनाया था। जीवन और जगत की विविध परिधियों से उन्होंने अपनी मान्यताओं के सूत्र बटोरे और अंधकार में भटकते समाज और मानवता को उसकी वास्तिविक स्थिति से परिचित करवाया। उन्होंने सार सार को गहि रहै, थोथा देई उड़ाय की स्थापना करके समाज को सार तत्व से परिचित करवाया। इस उदाहरण से स्पष्ट होता है कि–

कोई साधै जोग कूँ कोई बंछै भोग। रामभजन मधि मारिगा, चालै हरि का लोग।

जोग भोग दोई रोग हे, रामचरण तजि दूर। मधि मारग साधू चल्या, पाया सुख भरपूर[6]।

स्वामी रामचरण की मान्यता थी कि राम अगम शब्द है और वे उस राम की चर्चा अचिंत पुरुष के रूप में करते थे। उनका मानना था कि यह सारी सृष्टि राममय है और जैसे लकड़ी में आग छिपी रहती है, दूध में घी समाया रहता है, फूल में गंध विद्यमान रहती है, तिल में तेल और धरती में जल समाया रहता है वैसे ही सृष्टि के कण कण में राम का वास है। स्वामी रामचरण के राम निराकार साकार की परिधि से परें है। उनका मानना है कि सभी कुछ राम से शुरू होता है और उसी में ही समाप्त होता है। वे तो यह भी कहते हैं कि ब्रह्मा और माया के साक्षी भी ये दोनो ही अक्षर है। चौबीस अवतारों का तत्त्व इन्हीं दोनों अक्षरों में समाया हुआ है। वे कहते हैं कि विश्व के सभी आकारों का आधार देखा जाए तो वह निराकार ही बैठता है। निराकार का ध्यान किया जाए तो साकार दोषरहित हो जाता है। स्वामी रामचरण ने राम को गरीबनिवाज, विरुद्धारी, अनाथों का नाथ आदि नामों से भी अभिहीत किया है। ग्रंथ नाम प्रताप में वे राम के विविध रूपों में अवतारों की प्रशंसा करने के साथ उनके भक्त उद्धारक स्वरूप को नमन भी करते हैं। हिंदू संस्कृति में राम नाम के पक्ष राम की अवधारणा का विवेचन सभी छोटे बड़े मनीषियों ने किया है। रामचरण जी की दृष्टि से देखें तो उनकी तो सम्पूर्ण वाणी ही राममय है। स्वामी जी के माध्यम से किए गए राम नाम विवेचन का ही फल है कि रामसनेही सम्प्रदाय में सर्वत्र राम नाम की महिमा व्याप्त है। इस सम्प्रदाय के सभी साधु, स्त्री पुरुष परस्पर अभिवादन में रामजी राम शब्द का प्रयोग करते हैं। साधु व वृद्धजन राम कहकर ही आर्शीवाद प्रदान करते है। वस्तुत: उनके लिए राम का नाम ही तो तारक मंत्र है। स्वामी जी स्वयं ही अपने पंथ को रामसनेही नाम दिया था। और धर्म को रामधर्म के रूप में माना था। रामसनेही संप्रदाय के शोधकर्ता कैप्टन वेस्मकट ने भी महंत नारायणदासजी से प्राप्त वाणी के कुछ संकलित हस्तलिखित अंश के प्रत्येक पृष्ठ पर राम शब्द लिखा देखकर राम शब्द की महत्ता को अपने शब्दों में इस प्राकर व्यक्त किया है।

The head of the each page is inscribed with the holy name of Ram, used by the society as an initial tital of respect, corresponding with the Alif Allah of musalman and sri of the Hindus and signifying, that an author solicits the blessing of god on commencing a work, and invokes success on the undertaking.[7]

स्वामी रामचरण ने हिंदू संस्कृति के भक्ति तत्त्व को अपने ग्रंथ अमृत उपदेश के तृतीय प्रकाश में विवेचित किया है। वे भक्ति के तीन भेद बतलाते है।

1. कनिष्ठ भक्ति 2. मध्यम भक्ति 3. उत्तम भक्ति

गहरायी से देखा जाए तो यहाँ उनका भक्ति तत्व निरूपण भागवत को लक्षित करता है। किंतु स्वामी रामचरण इस भेद को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि कनिष्ठ भक्ति में प्रतिमा सेवा ही ईश्वर या हरि की सेवा के समान है। जब कि मध्यम भक्ति में गुणातीत होकर निरंजन का भजन अभिष्ट है। उत्तम भक्ति में साधक पूरी तरह कामना से विरक्त होकर निजस्वरूप हो जाता है। रामचरण जी उत्तम भक्ति को श्रेष्ठ मानते हैं। मध्यम में निरंजन के भजन का विधान है, पर कनिष्ठ में प्रतिमा सेवा की व्यवस्था है, अत: कनिष्ठ भक्ति पर तो स्वामी जी टिप्पणी ही लगा देते है। यह जानना रोचक है कि स्वामी रामचरण ने कबीर की भांति राम की उपासना पत्नी भाव से की है। राम भर्तार में अपनी लौ लगानें की बात उनके एक पद में दृष्टव्य है–

एक राम भर्तार को मनां धार इकतार। मनां एक इक तार बिन नहिं परसन कर्तार।

लेकिन जब बात संयोग पक्ष के पश्चात वियोग पक्ष की हो तो स्वामी जी विरह भावना की भक्ति में स्वयं को विरहिणी की भूमिका प्रदान करते है। सच्चे भक्त का कोमल मन अपने रमइया के लौटने की प्रतीक्षा में डूबा रहता है। पिया की सूनी सेज उसका दुख निरंतर बढाती रहती है। विरहिणी अपने प्रिय को पानें के लिए वन वन विचरण करती है। बार बार अशक्तता से वह गिरती है पर फिर उठती जाती है। क्योंकि प्रेम उसे बैठने नहीं देता है। जब तक प्रेम नहीं होगा उसके जीवन का अंधकार नहीं मिटेगा। इस अंधकार को मिटाने की युक्ति यही है कि विरहणी के हृदय में दीवाली मनें। वह तब अपने प्रेम का दीपक जलाएगी और उसके आलोक में अपने राम का दीदार करेगी।

विरहिणी का यह स्वरूप निरंतन भक्त कवियों की रचनाओं मं मिलता रहता है। स्वामी रामचरण जी कामानना है कि यह जीवन बड़ें ही प्रयत्न से मिलता है। और जब यह मिल जाता है जो यह बड़े भाग्य की बात होती है। इसलिए यह आवश्यक है कि इस जीवन को अपने सार्थक स्वरूप में जिया जाए। इस सार्थकता के लिए रामरस के समान दूसरा कोई रस नहीं है। एक बार जो व्यक्ति इस रस में डूब जाता है वह सदैव यही कामना करता है कि वह इस रस में डूबा रहे। रामचरण जी इसीलिए आमजन को इस रस के पान का अवसर हाथ से न जाने देने के लिए कहते हैं। और सचेत करते हैं।

स्वामी रामचरण का मानना है कि जो व्यक्ति इस संसार में आकर संतोषवृति को नहीं अपनाता है वह नित नवीन दुखों को अपने जीवन में प्रवेश देता है। वे कहते थे कि संतोषी सदा सुखी रहता है। फिर चाहे वह घर बसाकर रहने वाला हो या वन में निवास करने वाला। संतोषी व्यक्ति का हृदय आनंद, उदारता, उत्तम आशा का निवास है।

''संतोषी सुखियां सदा भल ग्रेही वनवास। आनंदकंद उदारचरित उत्तम आश निवास।''

''तृष्णवंत सुखिया नहीं, सुखी संतोषी होय। कहा जगत भक्ता कहा, कहा काजी पंडित होय।''

रामचरण जी का कथन है कि संसारी, भक्त, काजी तथा पंडित में से कोई भी यदि तृष्णा से ग्रसित है तो वह सुखी नहीं हो सकात है। परंतु यदि इनमें से कोई भी यदि संतोषी है तो वह निश्चय ही सुखी होगा। संतोषी व्यक्ति संसार में कहीं भी क्यों न चला जाए वह जहाँ भी रहेगा सदैव सुखी रहेगा।

''रामचरण रामत करो, भल बैठ रहो इक ठांहि। संतोषी जहां तहां सुखी, लोभी सुखिया नाही।''

संसार की यही रीत है कि जो व्यक्ति जितना संतोषी होगा समाज में उसका सम्मान भी उतना ही अधिक होगा। जबकि लोभ के होने पर तिरस्कार की संभावना उतनी ही अधिक होती है।

''आदर अधिक संतोषी सैं, स्वारथ होय कुध्यान। भक्तिभाव घट जाए सब, बिलै मान गुरू ज्ञान।''

स्वामी रामचरण का मानना है कि संतोषी होने के साथ व्यक्ति यदि सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन में सत्य के पक्षों को अपनाता है तो उसकी मनुष्य योनी सार्थक हो जाती है। उनकी दृष्टि में यदि जीवन का कोई आदर्श है तो वह सत्य ही है। वे कहते हैं कि

सच बोलो सच सुनों सच देखों सत्य का ही ध्यान करों।

सत्य आखिर जीतता है, और उसकी ताकत इतनी ज्यादा होती है कि उसे किसी भी प्रकार से दबाया नहीं जा सकता है। हालांकि इस तथ्य को सारा संसार जानता है पर इस पर चलनें का प्रयास बिरलें ही करते हैं। सच ही है जो संत अपने अनुभवों से सीखकर सत्य के साथ अपने जीवन को मानव व संस्कृति के सकारात्मक पक्षों की ओर उन्मुख कर देता है। वह निश्चय ही मानवता को नव आयाम देता ही है। साथ ही वह सांसारिक मनुष्य के सामने जीवन और उसकी प्रविधियों का एक ऐसा पथ प्रस्तुत कर देता है जिससे आने वाली पीढियां निरंतर अपनी सही मंजिल की ओर उन्मुख होती रहती हैं।

स्वामी रामचरण ने अपने रामसनेही पंथ के माध्यम से न केवल हिन्दी कविता को भव्यता दी बल्कि हिंदू संस्कृति को नव सौपान दिए। इस सम्प्रदाय के संतों द्वारा वरिचित साहित्य की उपलब्धता ने हिन्दी कविता को अनुपम सहयोग प्रदान कर इस परम्परा को आगे बढ़ाने में अपना अपूर्व योगदान दिया है।

सन्दर्भ सूची

1. प्रकाशकीय : श्री रामसनेही संप्रदाय, पृ. 1

2. डॉ. पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल: प्राचीन हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों की खेज का चौदहवाँ त्रैवार्षिक विवरण (1929-31) पृ. 137

3. अणभैवाणी, साखी, साध संगति को अंग छं 2 पृ. 21

4. वही साखी अवगुणग्राही को अंग पृ. 30

5. वही चंद्रायणा, अज्ञानी को अंग, छं 6 पृ. 81

6.अणभैवाणी, साखी, मध्य को अंग, पृ. 50

7. Journal of the Asiatic sociefy, Feb. 1835